वार्षिक मूल्य 50 रूपये

धर्म जीवन

मई – जून – 2015

* कब कोई गुरू का कारज कर सकता है
* मैं अमृतलोक का राही बन गया हूँ
* अमेरीका के एक विचारशील जन का स्वप्न किस तरह पूरा हुआ
* विज्ञान के प्रति भ्रान्ति
* अकेलापन
* बजुरगों से दूरी न रखें
* नेचर का एक अति विचित्र नियम
* अमूल्य सत्य

देवात्मा फरमाते हैं

16 अक्तूबर सन् 1923 ई०

जब 'मैं' घटती है, तब सच्चा परहित का भाव पैदा होता है। क्योंकि जिस हृदय में 'मैं' का जाप अधिक रहता है, जो हृदय अपनी इच्छा पूरी करना, अपनी प्रशंसा, अपना सुख, अपना आराम लाभ करना चाहता है, उसे जहां भी इस प्रकार का बदला न मिला, अर्थात् ज़रा कुछ सुख, स्वाद, आराम न मिला, ज़रा अपनी इच्छा के अनुसार कुछ प्रशंसा न हुई, ज़रा रिपोर्ट में अच्छी खबर न लिखी गई, वहीं वह बिगड़ बैठता है। उसके भीतर परहित के भाव की जाग्रति या उन्नति नहीं हो सकती । इसलिए 'मैं' के अनुराग से निकलने की नितान्त आवश्यकता है। यदि तुम सच्चा धर्म जीवन लाभ करना चाहती हो, तो तुम्हारे सामने केवल औरों की भलाई होनी चाहिए । उसमें तुम अपना कोई भी स्वार्थ न रखो । यदि तुम केवल उच्च भावों से दूसरों की सेवा करोगी, तो चाहे एक समय में बज़ाहर कोई अच्छा नतीजा न भी निकल सके, तो भी तुम्हारा अवश्य भला होगा । तुम सचमुच परोपकार करने वाली प्रचारका तब ही बन सकोगी, जब नीच घ्णा भाव को अपने भीतर से नष्ट करने में सफल काम हो सकोगी वरना तुम सच्ची प्रचारका नहीं बन सकती । किसी सभा में अच्छा बयान कर सकती हो, परन्तु तुम उन पर कोई अच्छा असर नहीं डाल सकती । अपने भीतर से घृणा भाव को नष्ट करने के लिए प्रतिदिन सच्चे साधन करो, जिससे नीच घृणा का भाव तुम्हारे भीतर से नष्ट हो । यह नहीं कि कभी कभी सप्ताह में एक दो दिन नीच घृणा को नष्ट करने का साधन कर लिया, इस महा भयानक रोग को दमन करने का प्रतिदिन साधन करो । यदि किसी तरह से इस बड़े रोग से तुम उद्धार पा जाओ, तो तुम्हारा बहुत बड़ा हित हो सकता है और औरों के लिए भी उच्च दृष्टान्त बन सकती हो, वरना कई अच्छे भाव जो विरसे में आए हैं, वह भी नष्ट हो जाएंगे। अब तक तो अधिकतर पढ़ाने या प्रबंध का काम ही करती रही हो, परन्तु हमारी यह आकांक्षा हैं कि तुम बहुत अच्छी प्रचारका बन सको। यदि इस घृणा भाव से ऊपर हो जाओगी, तो तुम्हारी ज़बान और तुम्हारे कलाम में ताक़त आएगी जो औरों के दिलों पर असर करेगी ।

बदला लेने का कोई भाव न होना चाहिए । हमें लोगों ने एक समय इतना सताया है कि जिसकी कोई हद नहीं। परन्तु हमने कभी किसी को घृणा नहीं की, बल्कि सताने वाले का भी सदा भला ही चाहा है। फिर ऐसे किसी जन को जब हमारी रोशनी मिली है और उसने अपने अपराध के विषय में खुद दंड लेना चाहा है, तब भी हमने यही कहा है कि हमने तुम से कोई बदला नहीं लेना, तुम्हें अपना भला इस दंड के लेने में नज़र आता है, तो तुम बेशक ग्रहण कर लो । हम उसमें सहायता दे सकते हैं, तुम खुद दंड लो, हम तुम्हें कोई दंड देना नही चाहते । अपने दिल में बार बार यह प्रश्न करो कि क्या मैंने समाज में ज़िन्दगी इसलिए दी है कि मुझे प्रशंसा मिले, मेरी इच्छा पूरी हो, मुझे इवज़ाना मिले । तुम्हारे सामने यह आना चाहिए कि मैं तो इसलिए समाज में आई हूं कि मेरा भला हो, यदि वह नहीं होता तो यह कैसा घाटे का सौदा है! (उस समय अपनी अत्यन्त असहाय और कृपापात्र अवस्था को सामने ला कर मेरी आंखों से विवश ही आंसू जारी हो गए) बार बार ऐसा यत्न करो कि जिससे तुम इस रोग से निकलो और भलाई का बदला भलाई ही पा सको ।

धर्म जीवन

खण्ड 28 अंक 5 – 6

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

मई – जून – 2015
वार्षिक मूल्य 50 रूपये

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

कब कोई गुरू का कारज कर सकता है?

परम पूजनीय भगवान देवात्मा का आर्विभाव विकास क्रम की एक महा अलौकिक और महा वचित्र घटना है। उनकी मनोवैज्ञानिक गठन अद्वितीय है। उनकी सत्य और शुभ अनुराग की शक्तियां और मिथ्या और पाप वैराग्य शक्तियां अद्वितीय, उनकी धर्म शिक्षा अद्वितीय, उनका जीवन लक्ष्य अद्वितीय और उनका कारज भी अद्वितीय है। यह महत्वपूर्ण सच्चाई है कि कब कोई जन उनका कारज, कुछ करने के योग्य होता है जानने से पहले हमें यह स्पष्ट जानना आवश्यक है कि परम पूजनीय भगवान का मुख्य कारज है क्या?

जो परम पूजनीय भगवान का रूप है, वह ही उनका लक्ष्य है। और वह भी उनका अद्वितीय कारज है ''सत्य और शुभ को लाने का, अशुभ, मिथ्या मिटाने का'' या और सरल शब्दों में ''नीच जीवन मिटाने का और उच्च जीवन को लाने का।'' ही गुरू महाराज का अद्वितीय लक्ष्य है और यही भगवान देवात्मा का अद्वितीय मुख्य कारज है। मानव समाज के अन्दर, मनुष्यों के हृदयों के भीतर, महा ज़ोरदार नीच सुख लालसाओं और नीच घृणाओं का राज्य है। यह नीच अनुराग और नीच शक्तियों से ही सब पाप और झूठ भरा नीच जीवन बनता है । उन नीच सुख कामनाओं को मानव हृदयों से मिटाने और उनके स्थान पर उच्च और भले, सात्विक, परहित करने वाली भावनाओं को मानव हृदयों में पैदा करना ही केवल और केवल परम पूजनीय भगवान देवात्मा का अनोखा कारज है।

जब कोई इन्सान गुरू महाराज के देव प्रभावों को पाकर परिवर्तित होता है और वह मोटे मिथ्या विश्वासों को और मोटे मोटे आठ पाप कर्मो को छोड़कर गुरू महाराज का सेवक बनता है, तो कुछ कुछ सेवकों के भीतर गुरू महाराज का मानव रूहों में उच्च परिवर्तन पैदा करने वाला कारज करने की प्रेरणा और इच्छा पैदा होती है कि जिस प्रकार उनका भला हुआ है, और भी किसी का भला हो । वह इस पक्ष में यत्न करने या कोशिश करने के लिए स्वभाविक हाथ पैर मारने लगते हैं, और तृप्त भी होते हैं। वह अपनी अवस्था और समझ के साथ प्रचार करते हैं और अपने प्रचार सम्बन्धी संग्राम को विशेष महत्व देकर प्रसन्न भी होते हैं।

जब किसी सेवक को अधिक सत्संग करने का अवसर प्राप्त होता है तो उसको धीरे धीरे अधिकारी होने से पता लगता है कि सत्संग में मनुष्य का ध्यान अपने जीवन की ओर जाता है। उसको अपनी कमियां दिखाई देती हैं, वह उन्हें दूर करता है और संगत से जुड़ता है। अधिकारी होने पर उसका अधिक से अधिक अपने से उच्च आत्माओं के सत्संग में जाने को दिल करता है। कईयों के भीतर तो इतना जोरदार उच्च संगत द्वारा उच्च परिवर्तन आता है कि वह इसी कारज के लिए अपना

सारा जीवन भेंट कर देते है और सदा के लिए उच्च संगत के साथ जुड़ जाते हैं। इसलिए अगर उन्हें घर बार छोड़ना पड़े, अपना कोई रोज़गार का साधन वा नौकरी छोड़नी पड़े, बेशक उसके निकटी सम्बन्धी विरोधता करते हों, दुखी होते हों, रोते कुरलाते हों, परन्तु देव प्रभावों द्वारा जगाया विवेक उसे सब प्रकार की विरोधताओं का सामने करने की सामर्थ्य देता है। वह विकासार्थी बनकर शिक्षा पाता है, फिर समाज का कर्मचारी, फिर उच्च पदधारी बन जाता है, उक्त सब प्राप्त करके प्रचार करने का संग्राम करके खुशी प्राप्त करता है।

उक्त सब संग्राम मुबारक हैं और यह साथी सेवकों की किसी सीमा तक रक्षा वा आत्मिक सहायता भी करते हैं। संग्रामी जनों के लिए भी वहां तक यह संग्राम लाभदायक है, जहां तक उनके प्रेरक भाव हितकर और उच्च हों ।

गुरू महाराज पुराने समय के उच्च कर्मचारियों को बार बार यह चेतावनी देते थे कि अधिकतर काम तो अहं अनुराग को लेकर होता है।

हमने तो यह सचाई जाननी है कि कब कोई सौभाग्यवान जन गुरू महाराज का कारज कर सकता है? गुरू महाराज का कारज ''नीच जीवन मिटाने का और उच्च जीवन पैदा करने का ।'' यह काम वह मुबारक सौभाग्यवान साथी सेवक कर सकता है, जिसमे स्वयं के किसी न किसी नीच अनुराग से अपनी किसी नीचता से मुक्त होने का कोई फिकर वा संग्राम जारी हो रहा हो । जिस सेवक में अपनी किसी भी नीचता का बोध नहीं, अपनी किसी नीचता का दुख और डर नहीं, वह इन्सान काफी भाग दौड़ करके भी गुरू महाराज के कारज में सच्चे अर्थो में सफल काम नहीं हो सकता । आप बचने का संग्राम करने वाला ही दूसरों को बचा सकता है। गुरू महाराज ने जगह जगह व्याकुल होकर फरमाया है, पहले अपना फिक़र करो, आप बचो, फिर ही दूसरों को बचा सकते हो।

अपनी किसी नीचता से मुक्त होने का संग्राम कब आरम्भ होता है या हो सकता है, इस रहस्य को जानने के लिए नियम समझने पड़ेंगे या पूरे करने पड़ेंगे ।

अपनी नीचता से मुक्त होने का मुबारक क़म देवात्मा सतगुरू जी के अति दुर्लभ देव प्रभावों के द्वारा ही शुरू हो सकता है। देव प्रभावों तक बार बार रसाई की योग्यता के प्राप्त होने से ही देव प्रभाव प्राप्त हो सकते हैं। पर्याप्त मात्रा में देव प्रभावों की प्राप्ति ही हमें अपनी किसी नीचता की महा भयानक और विनाशकारी तस्वीर दिखा सकती है और हमारे भीतर अपनी किसी भयानक नीचता को उसकी प्रबलता और विनाशकारी रूप को उज्जवल करके, उसके प्रति सच्चा दुख और भय पैदा कर सकती है। जब हमारे भीतर पर्याप्त मात्रा में दुख और भय पैदा होगा, तब हमारे अन्दर अपनी नीचता से बचने का अवश्य, उक्त दुख और भय की मात्रा में फिक़र और संग्राम शुरू हो जाएगा ।आवश्यकता तो देव प्रभावों के अमृत तक रसाई की है।

ठोस सच्चाई यह है कि देव प्रभावों तक रसाई के ठोस नियमों को न हम संजीदगी से जानने का यत्न करते हैं, न उन्हें पूरा करने की कोई फिक़र या आवश्यकता अनुभव करते हैं। यही कारण है कि हमारी सच्चे अर्थो में काई ठोस रसाई प्राप्त करने की योग्यता का हमें कोई ध्यान ही नहीं रहता। न ही योग्यता को पैदा करने का कोई संग्राम ही होता है। बिना देव प्रभावों तक ठोस रसाई की योग्यता पैदा होने के, कोई भी गुरू महाराज का कारज, लाख यत्न और संग्राम करके भी, बहुत चाहकर भी, नहीं कर सकता ।

सो यह जानने और महसूस करने की बेहद जरूरत है कि वह कौन सा नियम है या साधन है, जिसके

साथ हम स्वयं अपने साधन व संग्राम द्वारा अनुपम देव प्रभावों तक रसाई हासिल कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में परम पूजनीय भगवान देवात्मा ने बहुत ठोस और स्पष्ट रोशनी बार बार दी है, जो इस प्रकार है : –

''स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घमंड और नीच घृणा रखकर कोई इन्सान देवात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापन नहीं कर सकता, न ही उनकी पूजा करने के (उनके अनुपम देव प्रभाव पाने के) योग्य हो सकता है''

''अहं अनुराग के स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घमंड और नीच घृणा चार महा भयानक अंग हैं, वह सबके सब आत्मा के लिए पतनकारी हैं। यहा महा नीच भाव भिन्न भिन्न जनों को, भिन्न भिन्न परिवारों को, और (समाजों) कौमों को जहां तक सम्भव है तबाह करके छोड़ते है। जिस कदर इन महा नीच भावों का अधिकार उनके ऊपर से हटता है, उसी कदर उनकी भलाई का मार्ग खुलता है।''

''तुम जिस देव समाज की सेवा करने के इच्छुक हो और जिसकी हानि के, अहं अनुराग सम्बन्धी स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घमंड और नीच घृणा, यह चार कारण मुख्य हैं, क्या यह तुम्हारा फर्ज़ नहीं है कि तुम इन चार नीच भावों से स्वयं निकलो और दूसरों को इनसे निकालने का संग्राम करो।''

''देव समाज को भिन्न भिन्न जनों के अहं सम्बन्धी स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घमंड और नीच घृणा आदि नीच भावों से बहुत हानि पहुंची है।''

उक्त देववाणी जैसे पुकार पुकार कर कह रही है कि हम अहं अनुरागी होकर, उससे अबोधी रहकर, उसको महा नीच और महा विनाशकारी देखकर, परम पूजनीय भगवान के साथ कोई सम्बन्ध नहीं बना कर सकते, कोई योग नही कर सकते, उनके देवरूप के दर्शन नहीं कर सकते, उनकी कोई सच्ची पूजा नहीं कर सकते और उनके प्रभावों को नहीं पा सकते।

ठोस, ज़मीनी महान परन्तु अति कड़वी सचाई यह है कि संसार भर का शायद ही कोई माई का लाल हो जो अपने अंह का कुछ सच्चा बोध रखता हो सच्चा भय और दुख पैदा करके उसे घटाने का कोई सच्चा यत्न करता हो।

यह सचाई देव समाज के सब मैंबरों के सम्बन्ध में भी, क्या महाराज के समय में और क्या उनके बाद हम सब सेवकों के सम्बन्ध में सत्य है। यदि श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी महाराज जी जैसी विशेष योग्यताएं रखने वाले, त्याग की मूर्ति अपने अंह अनुराग सम्बन्धी अन्धेरे में बहुत लम्बा समय, वह भी गुरू महाराज की नायाब वर्तमानता में रहकर और उनके उपदेश सुनकर, इस पक्ष में हानि को प्राप्त हो सकते है, तो हमारे जैसे नीच, महा अबोधी, चींटी की हैसीयत रखने वालों की क्या दुर्दशा हो सकती है, इसका विचारशील और बुद्धिमान जन कुछ अन्दाजा लगा सकते हैं।

इस सचाई को हम अपनी समाज की आज की हालत को, प्रचार के काम को, उससे पैदा होनें वाले ठोस, उच्च परिवर्तनों के नतीजे देखकर समझ चुके हैं। सचाई तो यह है कि श्रद्धेय श्रीमान ईश्वर सिंह जी, फिर माननिय उच्च लोकवासी श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी के बाद हम और हमारी समाज बिल्कुल यतीम हो चुके हैं। गुरू के कारज की लगभग इति श्री हो चुकी है। हमारे जीवन देव प्रभावों तक रसाई के योग्य नहीं रहे, इसलिए गुरू महाराज का अनोखा और सर्वोच्च कारज करने के पूर्ण अयोग्य और असमर्थ्य हैं।

अंह अनुराग का ऐसा संवेदनशील मामला है कि अपने सम्बन्ध में हम इस का नाम तक सुनने को रता भर भी तैय्यार नहीं। उसको अपने भीतर देखना और उसका बोधी होना तो दूर की बात है।

अपने सम्बन्ध में प्राय: हमें कोई शक, चिन्ता या ख़्याल तक भी नहीं उपजता कि मैं भी घमंडी हो सकता हूं। यह बड़ी दुखांत है। अपने सम्बन्धी, अपने विरुद्ध किसी से भी कुछ ऐसा सुनने के लिए हम बिल्कुल तैय्यार नहीं हैं। फिर इसके स्वभाविक परिणाम उपजने तो आवश्यक हैं।

मोटे तौर पर यह है कि अंह का प्रबल और ज़ोरदार अधिकार अपने अन्दर रखकर हम न कोई परम पूजनीय भगवान देवात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापन कर सकते हैं, न कोई सच्चा योग कर सकते हैं, न उनके देव प्रभावों तक रसाई पा सकते हैं, क्योंकि उन तक हमारी रसाई नहीं होती, इसलिए न कोई सच्चा, उच्च फल पैदा कर सकते हैं और न ही उपजाऊ प्रचार ही कर सकते हैं। अंह का अधिकार रखकर इसका बोध पाए बिना और उसे घटाए बिना और उसे घटाने के लिए यथेष्ट साधनों में से गुज़रे बिना, हम कोई भी सच्चा प्रचार नहीं कर सकते हैं।

उच्च संगत में पहुंच कर और उसमें बार बार प्रवेश करते रहकर जो जो और जिस सीमा तक हमारे भीतर निर – अकांक्षित (अपने आप) परिवर्तन आ जाता है और आता है, हम अपने जीवन में उससे आगे अकसर नही देखते और उसे अपने परिवर्तित जीवन द्वारा या पुस्तकों के पाठ द्वारा, अपने प्रचार का संग्राम करते हैं और कर सकते हैं। ऐसा हमारा संग्राम वा प्रचार अधिकतर अंह – मूलक ही होता है। इसका लाभ किसी अंश अवश्य हो सकता है, परन्तु इसके साथ हमें लाभ के स्थान पर अधिकतर बहुत हानि होती है।

बलदेव सिंह

मैं मनुष्यात्मा, आप देवात्मा, बड़ा फर्क जैसे ज़मीं आसमां

मेरे आत्मा की जो हानि हुई,
नीच अनुरागों की ही मेहरबानी हुई।
आपकी प्रकृति का कैसे करूं सामना,
मै मनुष्यात्मा, आप देवात्मा।
नीच अनुराग गुझको बचाते रहे,
देव प्रभाव मुझको बचाते रहे।
आत्मिक हितकर्ता मेरे बस आप हैं,
मैं मनुष्यात्मा आप देवात्मा ।
मैं अन्धेरे से भी डरता था कभी,
अब रोशनी से भी हूं मै तो डरने लगा ।
आत्मिक अन्धकार मेरा, अब भी है दरम्यां,
मै मनुष्यात्मा आप देवात्मा।
सत्य ज्ञान आपका विज्ञान मूलक मिला,
मैं तो मिथ्या को ही सगा समझता था ।
आत्मा को अमर मैं समझता रहा,
गर्क अपना ही बेड़ा आप करता रहा।
पतन कर खुदकुशी कर रहा आत्मा,
मै मनुष्यात्मा आप देवात्मा ।
दिल पे अधिकार दे न सका मै तुम्हें,
नीच रागों ने गुझको दिया न समय।
कैसे दलदल से निकलूं मैं तेरी शक्ति के बिना,
मैं मनुष्यात्मा आप देवात्मा ।
मुझको परिशोध का बल तू प्रदान कर,
मेरे भगवान मेरी अवस्था जानकर।
मिटा सकूं आत्मा के मैं काले निशां,
मै मनुष्यात्मा आप देवात्मा

मैं अमृतलोक का राही बन गया हूँ

मेरे ज्योति दाता, मेरे उद्धारकर्ता, विनाश की बहुत भयानक और दुखदाई गति से मुझ अति कंगाल और दीन हीन को मोड़ कर, विकास की महा अमूल्य, अति सुखदाई और स्वर्गीय उच्च गति की ओर मुझे ले जाने वाले, मेरे इस दुनियां में सबसे बढ़ कर हितकारी, उपकारी और कल्याणकारी सम्बन्धी, मेरी पूजा के योग्य तारण हारे श्री देवगुरु जी!

हार्दिक नम्रता, गहरी श्रद्धा और भक्ति भाव से भर कर आपकी पवित्र चरण धूलि में सिर रख कर आशीर्वाद प्रार्थना करता हूं । मैं किस मुँह से आपको धन्यवाद दूं, किन शब्दों में आपके उपकारों का वर्णन करूं, क्योंकर मैं आपके गुण गाऊं, किस प्रकार मैं अपने भीतर के कृतज्ञता, भक्ति और सेवा के भावों का प्रकाश करूं, मुझे कुछ सूझ नहीं पड़ता । मैं इस समय आपके श्री चरणों में आने से पहले की अपनी अवस्था को अपने जीवन की गति को, उस समय की अपनी आन्तरिक छवि को अपने सन्मुख लाता हूं, और देखता हूं कि उस समय यद्यपि मैं मनुष्य का अस्तित्व रखता था, मनुष्य देहधारी था, पढ़ा लिखा था, भला मानस और नेक कहलाता था, परन्तु वास्तव में जीवन के बहुत से अंगों के विचार से तो मैं बिल्कुल पशु था, और उसके अतिरिक्त जो कुछ था, वह मेरे आन्तरिक मैले, गन्दे और महा नीच भाव थे, जिनसे मैं परिचालित होकर पशुओं की सृष्टि की तुलना में बहुत नीच, मैला, और महा भयानक रूप से विनाशकारी अस्तित्व प्रमाणित होता था । मैं समझता था कि विद्या प्राप्ति में उन्नति कर रहा हूं, मैं धन उपार्जन के बहुत योग्य होता जाता हूं, मैं नाना प्रकार के सुख भोग रहा हूं, और भविष्य में अधिक से अधिक सुख भोगने के सामान इक्ट्ठे कर रहा हूं, और मेरे मां बाप और अन्य कुल सम्बन्धी भी ऐसा ही समझते थे, और इसलिए अत्यन्त हर्ष और हार्दिक उत्साह के साथ मेरे उस प्रकार के जीवन की गति में अपनी शक्तियों के अनुसार बहुत बड़े सहायक प्रमाणित होते थे। परन्तु अब मैं आपके श्री चरणों में आकर और आत्मिक ज्योति, जीवन तत्व ज्योति पाकर स्पष्ट देखता हूं कि मैं उस समय प्रकट रूप में सुख भोग कर और अधिक से अधिक सुख भोगने की आशा रखकर भी वास्तव में उसी प्रकार दिनों दिन अपने लिए दुखों और महा दुखों का सामान तैयार कर रहा था, जिस प्रकार एक व्यक्ति शराब पीने और वैश्याओं के पास जाने का अभ्यासी होकर देखने में तो सुख भोगता है किन्तु वास्तव में जहां घर बार, माल असबाब और अन्य सारी घर की पूंजी उजाड़ कर बाहर से नंग होता जाता है, वहां अपने शरीर को भी रात दिन अमिताचार और दुराचार के द्वारा अत्यन्त भयानक और दुखदाई रोगों का घर बनाता चला जाता है। ...ठीक इसी प्रकार की भयानक और दुखदाई गति मेरी थी । मैं एक वा दूसरी पाश्विक वासना का दास होकर उसकी तृप्ति के लिए एक वा दूसरे छूट जाने वाले पदार्थों से बन्धता चला जा रहा था और इसीलिए मेरा सारा प्रयत्न, मेरे जीवन की प्रत्येक गति, मुझे मृत्यु और महा नर्क की ओर ले जा रही थी, जिससे मेरे भीतर दिनों दिन अंधकार बढ़ता जाता था, और दिनों दिन अन्धकार से भरे हुए मनुष्यों से घिरता जाता था, उन्हीं का रूप बनता जाता था । इस प्रकार की मेरी नीच और महा मलिन अवस्था जब मेरे सन्मुख आती है तो मेरा हृदय कांप उठता है, और कांप कर आपके चरणों में आ गिरता है। ऐसी महा भयानक और नारकीय अवस्था से निकाल लेने वाले परम हितकर सम्बन्धी को धन्य – धन्य कहता तृप्त

नहीं होता । और अब उस महा मलिन और नीच अवस्था की तुलना में जब मैं देखता हूं कि आपके श्री चरणों में आ जाने से न केवल इस महा नारकीय अवस्था से मेरा उद्धार हुआ है किन्तु मैं अमृत लोक का राही बन गया हूं, मैं अमर जीवन की सबसे बढ़कर पदवी का अधिकारी बनने के मार्ग पर जा रहा हूं, मैं अमृत रस को कुछ न कुछ लाभ करने के योग्य होता जाता हूं, मैं मनुष्य जीवन की वास्तविकता को जानने और उसको सफल करने के योग्य होता जाता हूं, तो एक एक समय में अपने आपको धन्यवाद आदि भावों के प्रकाश के लिए मजबूर पाता हूं। शब्द बहुत तुच्छ, मेरी योग्यताएं बहुत तुच्छ, बाह्यक सामानों के विचार से मैं अपनी साधारण शारीरिक आवश्यकताओं के लिए भी दूसरों का मोहताज। ऐसी अवस्था में एक एक समय आपकी ऐसी पवित्र, परम हितकर और स्वर्गीय मूर्ति के लिए किसी प्रकार भी प्रसन्नता का कारण बनने का कोई उपाय न पाकर मेरे भीतर ही भीतर क्या गुजर जाता है, मैं कुछ वर्णन नही कर सकता ।.....इसमें सन्देह नहीं कि..... मैं अपने आपको लाखों और करोड़ों की तुलना में ऐसे महोच्च और संसार के सकल पदों और उपाधियों से उच्च अधिकार का अधिकारी पाकर संसार के राजाओं और सम्राटों से बहुत बढ़कर धनवान और सौभाग्यवान अनुभव करता हूं। क्योंकि चाहे मैं कैसा ही मलिन हूं, कैसा ही बे हैसियत हूं, किन्तु इससे बढ़कर मेरी हैसियत को सांसारिक बड़े से बड़े सामान और सम्पति, पद और उपाधि क्या बढ़ा सकते हैं, कि मैं आपके महा उच्च और सब अंगों में कल्याणकारी रूप का एक तुच्छ सेवक हूं। आपके पवित्र चरणों का एक तुच्छ दास हूं । आपके पवित्र चरणों का दास होकर मुझे जिस अमृत की प्राप्ति होती है और उस अमृत को पाकर जिस अमर जीवन का मैं अधिकारी बनता जाता हूं, उसकी तुलना में संसार के सारे सामान और उनके सब प्रकार के सुख भी क्या मूल्य रखते हैं? उस अमृत के बिना बड़े से बड़े धनवान राजे और महाराजे अपनी सारी धन सम्पति रख कर भी, सारे सुख के सामान एकत्र करके भी महा दुखी अवस्था को प्राप्त हो रहे हैं।

एक सेवक

सफा – 20 का बाकी

दिया। ऐसे में यह समझाना आवश्यक है कि वह कौन-सा भौतिक आधार है, जिसके कारण संतों और महात्माओं को समाज में इस हद तक मान्यता प्राप्त होती है। दरअसल, भारत विरोधाभासों का देश है। यहां एक तरफ विज्ञान और आधुनिक लोकतंत्र की मान्यता है और दूसरी पाखंडपूर्ण कर्मकांडों को बहुत आसानी से फैलने का अवसर मिला हुआ है। विश्लेषक मानते हैं कि किसी भी अस्थिर समाज में वैज्ञानिक चिंतन का स्थान आस्था ले लेती है। यहां इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है कि लोकतंत्र की तमाम घोषणाओं और दावों के बावजूद भारत में लोकतंत्र अभी भी पूर्ण रूप से संस्थागत नहीं हो पाया है और यही वह कमजोरी है जो बाबाओं, संतों और महात्माओं को आसानी से मान्यता देती है। नहीं तो ऐसा क्यों है कि विज्ञान की शक्ति के बड़े-बड़े साक्ष्यों से घिरे रहने के बावजूद लोग आसानी से 'लाल चटनी खाकर' अपने जीवन में परिवर्तन हो जाने की बात मान लेने हैं। भारत में बाबाओं का बोलबाला और उनकी मान्यता अपने आप में कोई रोग नहीं है। यह किसी गहरी बीमारी का लक्षण है, जिसका समय रहते इलाज करने की जरूरत है।

अमेरीका के एक विचारशील जन का स्वप्न किस तरह पूरा हुआ?

शायद सन् 1888 ई. में अमरीका के एक बहुत बड़े विचार शील जन ने एक पुस्तक लिखी थी, कि जिस का नाम ''परोपकारियों की बादशाहत'' था। भूमिका में उस ने लिखा था, कि जिन विचारों का इस पुस्तक में वर्णन किया गया है, उन्हें शायद एक या दो सदी के बाद इन्सानियत समझ सके। वह ईश्वर के विश्वास को त्याग चुका था। प्रचलित मतों के खोखलेपन को उन्होंने अच्छी तरह से प्रगट किया था और मनुष्य प्रकृति का अध्ययन करते हुए उन्होंने लिखा था, कि लाखों और करोड़ों मनुष्यों के हृदय में जो शक्तियां पैदा हो चुकी हैं, वह शक्तियां ऐसे जनों के जीवन में अन्याय और अपहरण का कार्य करा रही हैं। और जब तक मनुष्य का हृदय ऐसी शक्तियों के अधिकार में रहेगा, तब तक अपहरण और अन्याय का कार्य जारी रहेगा। और मनुष्य जगत् में अनमेल भी अवश्य वर्तमान रहेगा। यदि मनुष्य मात्र में कोई उच्च परिवर्तन उत्पन्न करना है, तो यह जरूरी है कि मनुष्यों के हृदयों में ऐसे उच्च बोध शक्ति रूप में उत्पन्न किए जावें, कि जो उन्हें विवश एक दूसरे के हित में लगा दें। इस के भिन्न उन्होंने यह भी लिखा था, कि मैं ऐसा भी अनुभव करता हूँ, कि मनुष्य जगत् के विकास क्रम में एक ऐसा अविर्भाव होगा, जो अपनी ज्योति और शक्ति पहुंचाकर इस पाप भरी दुनिया में पापी जनों के हृदयों में ऐसा उच्च परिवर्तन लायेगा, कि वह एक ओर जानबूझकर किसी की भी हानि करने के अयोग्य हो जाएंगे और दूसरी ओर जहां तक भी सम्भव होगा, वह कुछ न कुछ दूसरों की सेवा में लग जाएंगे। यह इस नेक जन का स्वप्न नेचर की अपनी गुप्त विधि के अनुसार पूरा हो चुका था और पूरा हो रहा है। ऐसा अद्वितीय और पूर्णत: अनोखा आविर्भाव हो चुका है, कि जो अपनी ज्योति और शक्ति से अधिकारी मनुष्यों में उच्च परिवर्तन ला रहा है। हमें इस प्रकार के उच्च परिवर्तन की असलियत को भी समझने की कोशिश करनी चाहिए। मनोविज्ञान के पंडित कुछ न कुछ बोध करते जाते हैं, कि जब तक किसी मनुष्य के भीतर उच्च भाव उस के आत्मा का अंग न बन जाएं और शक्ति रूप लाभ न करें, तब तक ऐसा जन उच्च जीवन धारी नहीं बनेगा। थोड़ी या अधिक परोपकार की लहर अनुभव करना या किसी न किसी समय एक या दूसरी प्रकार का कोई परोपकार का काम कर देना यह साबित नहीं करता, कि ऐसा जन इस अंग के विचार से परोपकारी है। उच्च बोध या उच्च अंग एक या दो बार लहरें उत्पन्न नहीं करता, एक या दूसरे समय में प्रकाश नहीं पाता, वह तो लगातार मनुष्य के हृदय में उच्च लहरें, उत्पन्न करता है और लगातार उच्च क्रियाएं कराता है। मैंने एक सच्ची कथा पढ़ी है, कि तीन चार साल की लड़की की माता गुजर गई, उसके पिता पहले ही गुजर चुके थे। उस यतीम और रोते हुए बच्चे को पड़ोसियों के हृदय पर उस की अवस्था के अनुसार जुदा जुदा असर हुआ। कुछ जनों ने यह भाव प्रकाश किया कि हाय! यह लड़की कितनी अभागी है। यह कह कर संतुष्ट हो गए और अपने – अपने घरों को चले गए। कुछ जनों ने यह भाव प्रकाश किया कि इस को एक यतीम खाने में पहुंचाया जावे और वहां तक पहुंचाने में जो खर्च हो, उसमें हम मदद् करने को तैयार हैं। कौन उस को यतीम खाना में

पहुंचावे? उस के लिए कोई तैयार न था, यतीम खाना दो सौ मील के फासले पर था, आखिरकार एक स्त्री तैयार हो गई और वह इस बच्चे को साथ लेकर चल पड़ी। रास्ते में वह एक स्टेशन पर उतर गई। वहां से शायद बस पर जाना पड़ता था, वह अपनी एक सहेली के यहां चली गई और उसको सारा माजरा सुनाया। उसकी सहेली के हृदय पर उस कन्या का बहुत गहरा असर हुआ। उसने अपनी सहेली को कहा कि आप वापिस तशरीफ ले जाएं। मैं इस के लिए कुछ कपड़े बनवा दूं। वह भद्र स्त्री इस लड़की को अपनी सहेली के पास छोड़कर चली गई। अब इस दयावान स्त्री ने दर्जी को बुलाया और कई प्रकार के कपड़े उस के लिए बनवाए। मुश्किल से चार पांच दिन गुजरे थे, कि अचानक उस स्त्री ने उस लड़की को रोते हुए सुना। वह बिल बिलाकर पुकार रही थी कि काश यदि मेंरी अम्मा होती ! तो.....लड़की के इस प्रकाश ने इस स्त्री के हृदय पर जादू का असर किया। उसने लड़की को छाती से लगा लिया और कहने लगी कि क्या तुम मुझे अपनी अम्मा बनाओगी? बच्ची की खुशी की हद न रही, और वह इस दयावान स्त्री को चिपट गई। और उस दयावान स्त्री का बयान है, कि यह लड़की बड़ी होकर मेरे सम्बन्ध में मेरी अपनी बेटी से भी बढ़कर कृतज्ञ प्रमाणित हुई है। अब इस दयावान स्त्री के हृदय में उस लड़की के लिए दया शक्ति फूट आई बाकी स्त्रियों के हृदय में कुछ न कुछ भाव जरूर उत्पन्न हुआ लेकिन शक्ति रूप में नहीं।

उच्च जीवन के मुसाफिरों के लिए इस उच्च बोध के पाने की अत्यन्त आवश्यकता है, कि जीवन उच्च बोधों वा अंगों को शक्ति रूप में पाकर बनता है न कि भाव प्रकाश करने से। और किसी नीच सुख अनुराग से सत्य मोक्ष तब प्राप्त होती है जब उच्च घृणा का भाव शक्ति रूप में वर्तमान हो। कभी – कभी किसी लहर का उत्पन्न होना काफी नहीं है। फिर भी न उत्पन्न होने से अच्छा है। परन्तु जो केवल लहरों की अवस्था में ही संतुष्ट रहते हैं वह अज्ञानी हैं। भगवान् देवात्मा तो उच्च अनुरागों के उत्पन्न करने के कार्य में लगे हुए हैं, और जब तक हमारे हृदयों में यह उच्च अंग शक्ति रूप में उत्पन्न नहीं होंगे, तब तक हमारी उन्नति का कार्य लगातार नहीं होगा, केवल भाव प्रकाश से हमारा मामला हल नहीं होगा।

- इस कलयुग में रुपया कितना भी गिर जाए, इतना कभी नहीं गिर पाएगा, जितना रुपये के लिए इन्सान गिर चुका है।
- एक बहुत अच्छी बात जो जिन्दगी भर याद रखिए, आपका खुश रहना ही, आपका बुरा चाहने वालों के लिए बड़ी सजा है।
- बेहतरीन इन्सान अपनी मीठी जुबान से ही जाना जाता है, वर्ना अच्छी बातें तो दिवारों पर भी लिखी होती हैं।
- [kwclwjr yksx ges'kk vPNs ugha gksrs] ijUrq vPNs yksx ges'kk [kwclwjr gksrs gSaA
- जब सड़क पर बारात नाच रही हो, तो हार्न मार मारकर परेशान न हों, गाड़ी से उतरकर थोड़ा नाच लें, मान शान्त रहेगा, टाईम तो उतना ही लगेगा।

विज्ञान के प्रति भ्रान्ति

यह कहना कि आधुनिक विज्ञान प्राचीन ग्रीस या भारत में विद्यमान था अनापशनाप बात है।

नोबल पुरस्कार विजेता भौतिक विज्ञानी स्टीवन वाईनबर्ग को प्राय: संसार के सबसे अधिक प्रभावशाली जीवित वैज्ञानिकों में से एक कहा जाता है। इन 82 वर्षीय अमेरिकन ने आधुनिक विज्ञान के जन्म के विषय पर अभी एक पुस्तक लिखी है ''To Explain the World'' सुबोध वर्मा के साथ वार्ता में उन्होंने उस तनाव के विषय में चर्चा की है जो विज्ञान और धार्मिक विश्वासों के बीच वर्तमान है।

प्रश्न :– बहुत से लोग यह विश्वास करते हैं कि आधुनिक विज्ञान अधिकतर उनके धर्मो की प्राचीन पुस्तकों या शिक्षाओं में पहले से ही था । उदाहरणार्थ, भारत में दक्षिणपंथी हिंदु यह दावा करते हैं कि अनेक वैज्ञानिक और प्रोद्योगिकी सफलताएं जैसे हवाई जहाज़, परमाणु बम्ब, प्लास्टिक सर्जरी इत्यादि 3,000 से 10,000 वर्ष पहले खोजी गई थी । क्या यह सम्भव है?

उत्तर :– यह मानना कि आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का ज्ञान लोगों के पास हज़ारों वर्ष पहले से ही था एक अनापशनाप या निरर्थक बात है। यद्यपि काफी कुछ खोया जा चुका है, फिर भी हमारे पास ग्रीस, बेबीलौन तथा भारत इत्यादि बहुत से प्राची ग्रंथ हैं जो न केवल यह दर्शाते हैं कि पहले के दार्शनिकों को इन चीज़ों का ज्ञान नहीं था परंतु उनके पास उन चीज़ों को सीखने के लिए भी कोई अवसर नहीं था ।

प्रश्न :– प्राचीन काल के और आधुनिक काल के विज्ञान में क्या अंतर है?

उत्तर :– हमने विचारों से आगे प्रश्न पूछते रहने की कला सीखी है, अवलोकन और प्रयोग के आधार पर सामान्य नियमों को सूत्रबद्ध करना तथा दोबारा और अधिक अवलोकन तथा प्रयोग करके इन सिद्धांतों की परीक्षा लेना सीखा है। इस प्रकार आधुनिक भौतिक विज्ञान (और अधिक से अधिक हद तक जीव विज्ञान भी) के गणित के नियमों को खोजने के योग्य हुआ है जो बहुत अधिक व्यापकता तथा भविष्यवाणी करने की शक्ति रखता है। प्राचीन और मध्यकाल के हमारे पूर्वज अक्सर यह विश्वास करते थे कि शुद्ध तर्क के द्वारा वैज्ञानिक ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है, और जहां वे अवलोकन का महत्व समझते थे, वह निष्क्रिय था, न कि प्रकृति को सक्रिय ढ़ंग से Manipulate करना जो आधुनिक प्रयोग का विशेषता सूचक है। इससे आगे, भौतिक जगत के संबंध में उनके मत या सिद्धांत अक्सर मानवी मूल्यों एवं धार्मिक विश्वासों के साथ गड्डमड्ड किए हुए थे जिन्हें आधुनिक भौतिक विज्ञान से निकाल बाहर किया गया है।

प्रश्न :– आधुनिक विज्ञान 17 वीं शताब्दी में ही क्यों उदय हुआ? इससे पहले या बाद में क्यों नहीं?

उत्तर :– यह बताना असंभव है कि वैज्ञानिक क्रांति ठीक ठीक कहां और कब हुई। फिर भी हम उन विकास की अनेक घटनाओं को बता सकते हैं जो इससे पीछे की शताब्दियों में हुई और जिन्होंने वैज्ञानिक क्रांति की ज़मीन तैयार की । एक, 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दी में यूरोप का पुर्नजागरण हुआ जिसके कारण वास्तविक दुनिया के विषय में बढ़ती हुई चिंता और दूसरे ईश्वरीय धर्म शास्त्रों से दूर जाने की क्रिया । एक अन्य बात छापाखाने का अविष्कार जिस कारण कोपरनीकस और

गैलिलियो जैसे वैज्ञानिकों की पुस्तकों को सारे यूरोप में शीघ्रता से प्रसार करना संभव हो सका । पीछे की ओर नज़र दौड़ाते हुए, हम 13 वीं शताब्दी के बाद से विश्वविद्यालयों के विकास की बात भी कह सकते हैं। यद्यपि ये ईसाई चर्चों के साथ सम्बंधित होने से विकसित हुए, परन्तु ये धर्म-निरपेक्ष वैज्ञानिक अनुसंधान के आश्रय स्थान बन गए जैसे पैरिस में बुरिदान के लिए ओरेस्मे, गैलिलियों के लिए पहुआ एवं पीसा और न्यूटन के लिए कैम्ब्रिज ।

प्रश्न :– विज्ञान की अभूतपूर्व प्रगति के बावजूद, सोसायटी द्वारा इसको स्वीकार करना सीमित दिखाई पड़ता है। वास्तव में आपने खुल्लमखुल्ला विज्ञान के विरूद्ध प्रचार करने वालों से जैसे मौसम बदलने को गल्त कहने वालों से या फिर विकास के नियम के विरोधियों से लोहा लिया है।

उत्तर :– आज विज्ञान के मूल्यों को नकारने वाला कोई नहीं हैं, परन्तु वैज्ञानिक ज्ञान के भीतर के तथ्यों को समझने के विषय में बहुत से लोग उलझन में है वे भूगोल भौतिकी (Geophysicists) वैज्ञानिकों द्वारा विश्व में गर्माई आने के विषय में खोजे गए परिणामों को संदेह की दृष्टि से देखते हैं, और वे अब भी इस बात को नहीं मानते कि किसी जाति का आरंभ प्राकृतिक चुनाव द्वारा विकास के सिद्धांत के अनुसार हुआ है। विशेषज्ञों द्वारा प्रमाणित विषयों पर खुला दिमाग रखना एक अच्छी बात है परन्तु एक ऐसा बिन्दु आ जाता है जहां विचारार्थ विषयों का निपटारा हो जाता है । हमारी पृथ्वी सपाट (flat) है या नहीं जैसी बात पर खुला दिमाग रखना मूर्खता है।

प्रश्न :– क्या किसी मनुष्य को वैज्ञानिक बनने के लिए धर्म को छोड़ना होगा ।

उत्तर :– बिल्कुल नहीं। ऐसे अच्छे वैज्ञानिक हैं (अधिक नहीं) जो काफी धार्मिक हैं। परन्तु विज्ञान और धार्मिक विश्वासों में तकरार है। सिर्फ इतना ही नहीं कि वैज्ञानिक खोजें कुछ धार्मिक विश्वासों को काटती हैं। इससे महत्वपूर्ण यह है कि जब कोई व्यक्ति उस ध्यान व खुले दिमाग के अनुभव में से गुज़र जाता है जिससे वैज्ञानिक सच्चाई खोजते हैं, तब वह धर्म द्वारा किसी ज्ञान पर अपनी हैंकड़ी के दिखावे के प्रति अपना सम्मान खो सकता है।

प्रश्न :– आपने पहले विज्ञान की ''सुन्दरता'' पर लिखा है। इसका क्या अर्थ है?

उत्तर :- कई शताब्दियों से वैज्ञानिक ज्ञान को खोजने में हमने वैज्ञानिक नियमों के विषय में एक दृष्टिकोण विकसित किया है जो प्रकृति का वर्णन कर सकता है, और हम ऐसे नियमों को उसी प्रकार सुंदर सोच पाते हैं जैसे एक पाल वाली किश्ती (Sail boat) का डिज़ाईन करने वाला यह महसूस करता है कि कैसे उसकी डिज़ाईन की हुई पाल किश्ती अच्छी तरह से तैरेगी और उस पाल किश्ती को सुन्दर रूप में सोचता है। एक वैज्ञानिक थ्योरी की सुंदरता को बताने के लिए कोई साधारण नुस्खा नहीं है परन्तु उसमें एक कठोरता/दृढ़ता अवश्य है, ऐसे गुण कि हम उस थ्योरी के विस्तृत विवरण के सामंजस्य (Consistency) को बर्बाद किए बिना नहीं बदल सकते ।

(टाईम्ज़ ऑफ इंडिया, 22 मार्च 2015 से साभार)

अकेलापन

किसी शायर ने अकेलेपन यानि तन्हाई के बारे में बड़े खूबसूरत अंदाज़ में कहा है :-

''हर तरफ हर जगह बेशुमार आदमी, फिर भी तन्हाईयों का शिकार आदमी''

विश्व में लाखों करोड़ों साथी मनुष्य होने के बावजूद हर इंसान निपट अकेला है। प्रकृति ने मनुष्य की संरचना, उसके जीवन की आगे बढ़ने की प्रक्रिया तथा अन्य कितनी ही बातों के लिए प्रत्येक मनुष्य को नितांत अकेला रखा हैं। अर्थात: भूख लगी हो तो स्वयं ही खाना पड़ेगा - ज्ञान पाना हो तो स्वयं ही मेहनत और लगन से प्रयास करके पढ़ना पड़ेगा - स्वास्थ्य ठीक रखना हो तो स्वयं ही स्वास्थदायक नियम पूरे करने होंगे, आदि आदि।

''मनुष्य-जीवन'' प्रकृति (Nature) का जितना अमूल्य तथा सुन्दरतम वरदान है उसकी रक्षा और विकास के लिए प्रकृति ने प्रत्येक मनुष्य की उतनी ही बड़ी ज़िम्मेदारी लगा रखी है। अर्थात: 'मनुष्य-जीवन' का सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य है अपना सम्पूर्ण आध्यात्मिक विकास करना और समस्त संसार को अपने जीवन के द्वारा सर्वोत्तम योगदान देना । जैसे बसों आदि में लिखा होता है कि सवारी अपने सामान की स्वयं आप ज़िम्मेदार है। इस बात को प्रकृति के दृष्टिकोण से देखा जाए तो कह सकते हैं कि हर मनुष्य अपनी 'जान' के लिए स्वयं जिम्मेदार है। जहाँ मनुष्य अपने जीवन की रक्षा और विकास के लिए सबसे अधिक स्वयं ज़िम्मेदार है, वहीं वह लाखों-करोड़ों की भीड़ में बिल्कुल अकेला है तथा कई अर्थो में बहुत असहाय भी है। इस लिए विश्व में करोड़ों मनुष्य एक व दूसरे विषय को लेकर मानसिक तनाव में बुरी तरह ग्रस्त देखे जाते है।

स्थूल-जगत में भी हम प्रति-दिन अपने जीवन में कई बार बिल्कुल अकेले हो जाते हैं। यथा: कोई कभी घर में बिल्कुल अकेला, कोई बाज़ार या कार्यालय को जाते हुए बिल्कुल अकेला, कोई देश-विदेश की यात्रा पर जाते अकेला, रात को जब हम निंद्रा देवी की गोद में समा जाते हैं तब सारा संसार होते हुए भी हम बिल्कुल अकेले होते हैं। मनुष्य जन्म लेता है तब भी अकेला और जब मृत्यु की गोद में समा जाता है तब भी अकेला होता है।

विचारशील फरमाते हैं कि हमें अपने अकेलेपन का ज्ञान तथा बोध पाना चाहिए तथा अपने अकेलेपन के साथ बहुत ही सुन्दरतम, ठीकपन (Righness) तथा कलात्मक रूप से जीने का अभ्यासी बनना चाहिए । अधिकतर लोग अकेलेपन से बहुत घबराते हैं क्योंकि जब उनके पास अपने मन को व्यस्त रखने के लिए कोई व्यक्ति या वस्तु नहीं होती तो वह ऊबने तथा बोर (Bore) होने लगते हैं। उन्हें यह पता ही नहीं चलता कि प्रकृति ने उन्हें किस-किस पक्ष में कैसे-कैसे सुन्दर गुण उपहार-स्वरूप प्रदान किये हुए हैं तथा वह उनके द्वारा कैसे आंतरिक प्रसन्नता तथा 'जीवन-रस' लाभ कर सकते हैं। क्योंकि ऐसे जन आंतरिक-आनंद और शान्ति को पाने में असफल रहते हैं, अत: अपनी असार और मिथ्या संतुष्टि के लिए वह दूसरे व्यक्तियों या वस्तुओं पर अनुचित रूप में निर्भर करने लगते हैं, जो कि बहुत ही भ्रम-पूर्ण स्थिति है, क्योंकि विश्व में आपके साथ कोई भी स्थाई रूप से सदा साथ रहने वाला नहीं है तथा हर अस्तित्व (जानदार/बेजान) एक न एक दिन आपको अकेला छोड़ कर चला जाएगा और तब चाहे मन की इच्छा से या मजबूरीवश आपको अपने साथ अकेले ही रहना पड़ेगा । दूसरे शब्दों में आपके साथ स्थाई रूप से

केवल आपका अपनापन (अपना अकेलापन) ही होगा।

यदि कोई जन अकेला नहीं रह सकता तो इस का सीधा सा अर्थ है कि 'प्रकृति – माता' की ओर से उसे जो कलात्मक गुण, क्षमताएं तथा योग्यताएं उपहार – स्वरूप मिली हुई हैं उनके बारे न वह कुछ जानता है, न उनको प्रयोग में ला रहा हैं, न अपने मनुष्य – जन्म को सफल कर रहा है तथा न ही 'जीवन – रस' लाभ कर रहा है। सही अर्थो में धर्म – वान बनने के विषय में तो ऐसा जन सोच भी नहीं सकता । इसके ठीक विपरीत उसके मन में अनेकों संघर्ष और द्वन्द प्राय: हर समय चलते रहे हैं जो उसे अकेला होने पर विशेष रूप से परेशान करते हैं और वह उनसे बचने के लिए बाहरी व्यक्तियों या वस्तुओं का खोखला सहारा ढूढता है ताकि उसका मन आंतरिक संघर्षो से जूझने के स्थान पर उन को भुला दें । जैसे बिल्ली को देख कर कबूतर आँखें बंद कर लेता है और समझता है कि बिल्ली रूपी मुसीबत टल गई है। ऐसे काम चलाऊ सहारे, जिन्हें पाने के लिए इंसान मरा जा रहा है, उसे कोई स्थाई शान्ति और संतोष नहीं दे सकते । ये बाहरी सहारे तो भूल – भुलईयों की तरह हैं। जिस शान्ति और संतोष को पाने के लिए हम बेचैन रहते हैं वह तभी मिल सकती है जब हम 'अपने – आप' के साथ मित्रता करना सीख लें तथा प्रकृति से उपहार – स्वरूप मिले गुणों, क्षमताओं तथा योग्यताओं का सदुपयोग करना आरम्भ कर दें क्योंकि देर – सवेर हम सबको ऐसा करना ही पडेगा ।

'अपने – आप' से भागना शान्ति पाने की राह नहीं है, इस से केवल शान्ति पाने में देरी लगती हैं। कटू – सत्य यह है कि हमें 'अपने – आप' को पसंद करना सीखना होगा, अपने साथ रहना सीखना होगा । अपनी क्षमताओं तथा योग्यताओं का सदुपयोग करना पड़ेगा । हमें सच्चे और उच्च – जीवनधारी जनों का साथ भी ढूंढना पड़ेगा । हमें सदा याद रखना चाहिए कि अंत में 'अपने – आप' को छोड़ कर विश्व की कोई वस्तु हमारे साथ स्थाई रूप से रहने वाली नहीं है। अत: इस दिशा में उन्नति करते हुए हमें 'आत्मिक – अवस्था' को इस ढंग से विकसित करना पड़ेगा कि भीड़ में रहते हुए हम जब भी चाहें 'अपने – आप' को अकेला अनुभव कर सकें और अकेला रहते हुए 'अपने – आप' को भीड़ में महसूस कर सकें ।

निष्कर्षत: ' अपने अकेलेपन को पहचानिए, उसे जानिये तथा अनुभव कीजिये । प्रतिदिन कुछ समय के लिए ऐसे रहिये जैसे कि आप विश्व में बिल्कुल अकेले हैं। उस समय आप न किसी के पति हैं, न पत्नी हैं, न पिता हैं, न पुत्र हैं, न छात्र हैं, न अध्यापक हैं । इतना ही नहीं, उस समय न आप स्त्री हैं और न पुरूष हैं, केवल एक मनुष्य हैं।

चन्द्रगुप्त

(अम्बाला शहर)

नोट : – अकेलेपन में आप क्या कुछ कर सकते हैं

(1) जैसा कि लेखक ने लिखा है कि हम अपनी योग्यताओं और क्षमताओं को जाने । यदि आपमें लिखने की योग्यता है तो आप अकेलेपन में ही अपने हार्दिक भावों को लिखकर उस योग्यता को और बढ़ा सकते हैं।

(2) यदि आप में पढ़ने का शौक है तो अच्छी, जीवन उपयोगी पुस्तकें अकेले में ही पढ़कर उनसे लाभ उठा सकते हैं। हम सेवक गण का सौभाग्य है कि हमें पूजनीय भगवान ने अद्वितीय ग्रन्थों का कीमती उपहार दिया है। उन्हें पढ़ने का अभ्यास करके जीवन का भला कर सकते है।

(3) हम और साधन न कर सकें तो अकेलेपन में

हम जन्म से लेकर अब तक के उपकारियों को याद करके उनके प्रति कृतज्ञता के भाव को बढ़ा सकते हैं। इन उपकारियों में आपके माता-पिता, भाई-बहन, अन्य निकटी सम्बन्धी, अध्यापक, किसान, वैज्ञानिक डाक्टर, मित्र, पड़ोसी, साथ काम करने वाले, चारों जगत, यदि हम एक-एक करके याद करने लगें तो इतनी लम्बी लड़ी बन जाती है, जो समाप्त नहीं होगी, आपका समय समाप्त हो जाएगा।

(4) आपके चारों ओर, आपके घर में, पड़ोस में समाज में, देश में, विदेश में इतने गुणधारी जन हैं, उनके गुणों को अपने अकेलेपन में याद करके उनके प्रति अपना सन्मान वा श्रद्ध बढ़ा सकते हैं। इससे दिल अकेले में भी प्रसन्नता अनुभव करेगा।

(5) यदि आप पढ़े लिखे हैं तो अकेले होने की सूरत में किसी को पढ़ा सकते हैं, जो न केवल आपके अकेलेपन की भरेंगे बल्कि आपकी सेवा भी हो जाएगी।

(6) योग्यता रखने पर आप किसी को नशों से बचाने में अपना समय लगा सकते हैं।

(7) समय तभी मिलता है, जब हमारे पास और कुछ करने के लिए नहीं होता, इस समय को अपनी किसी Hobby में, पेंटिग, सिलाई, कढ़ाई आदि में लगा सकते है इनमें आपको कभी अकेलापन अनुभव नहीं होगा।

(8) सबसे बढ़कर हम अकेलेपन में ही अपनी जीवन यात्रा में जो गल्तियां की हैं, कोई दुर्व्यवहार किए हैं, किसी को सताया तड़पाया है, उसे याद करके पछताने और उनका परिशोध करने का मन बना सकते हैं। मनुष्य अपने जीवन के विषय में यदि सोच सकते है तो अपने अकेलेपन में, नहीं तो जिन्दगी की भाग दौड़ में उसे अपने विषय में सोचने का समय ही नहीं मिलता, तो इसलिए अकेलेपन से घबराने के स्थान पर उसको उपयोगी सोच में, अपनी क्षमताओं के अनुसार उसे प्रयोग में लाएं, तो आपके साथ उपकारियों, गुणधारियों का कारवां चलेगा। फिर अकेले कैसे?

सुरजीत बराड़

बजुरगों से दूरी न रखें

बुजुर्ग अक्सर कहते सुने जाते हैं कि मूल से ज्यादा प्यारा सूद होता है। सूद (ब्याज) से यहां आशय नाती-पोतों से है। शायद ही कोई व्यक्ति हो, जो अपने बच्चों के बच्चों के साथ ज़्यादा से ज़्यादा समय न बिताना चाहता हो। कई वृद्धों की तो सारी खुशियां पोते-पोतियों के इर्द-गिर्द होती हैं, और वे जीते भी उन्हीं के लिए हैं।

एक छत के नीचे तीन पीढ़ियों का साथ तीनों के लिए लाभदायक होता है। यानी बच्चे, जवान और वृद्ध, सबके लिए। ऐसा साथ सम्भव न हो (विशेषकर नाना-नानी के मामले में), तब भी रिश्तों की प्रगाढ़ता और नियमित सम्पर्क से सबके व्यक्तित्व और जीवन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं।

बच्चों की बल्ले बल्ले

बच्चे के जीवन में दादा-दादी की भूमिका बेहद महत्वपूर्ण होती है। एकल और छोटे परिवारों के दौर में उनका महत्व और भी बढ़ गया है। माता-पिता के बाद घर के बुजुर्ग ही वे करीबी व्यक्ति होते हैं, जिन पर बच्चा पूरा भरोसा कर सकता है। उसके व्यक्तित्व के विकास के लिए इस भरोसे का पनपना अनिवार्य है।

वृद्ध दादा-दादी/नाना-नानी बच्चे की देखभाल के अलावा भी बहुत सारी भूमिकाएं निभाते हैं। वे वास्तविक अर्थों में बच्चे के 'दोस्त' बन सकते है। जिनसे बच्चा बेहिचक अपनी बातें साझा कर सकता है या शिकायतें कर सकता है। अक्सर देखा गया है कि छोटे बच्चे घर के वृद्धों के साथ ज़्यादा सहज रूप में रहते हैं, क्योंकि वे हमेशा एक-से-रहते हैं - माता-पिता की तरह नहीं कि कभी तो खूब लाड़-प्यार और कभी अनुशासन और कड़ाई दिखाने लगे । वृद्ध, बच्चे और उसके पूर्वजों के बीच की कड़ी होते हैं, जो उसे उसकी जड़ों से जोड़ते हैं। अपने अनुभव और इच्छा से वे उसके लिए ज्ञान, जानकारी, सहायता और सहयोग का स्त्रोत होते हैं। घर में वृद्धों की मौजूदगी से ही बच्चे धर्म-संस्कृति और संस्कार से परिचित होते है।

बड़ों के अनुभवों की छांव नन्हीं कोपलों को न सिर्फ ज़िन्दगी की कड़ी धूप से बचाती हैं, बल्कि स्नेहासिक्त विकास देती हैं। बजुरगों से दूरी बच्चों के हित में नहीं ।

अभिभावकों को आसरा

वृद्धों की मौजूदगी युवा अभिभावकों को एक हद तक निश्चित करती है। बच्चे से जुड़ी हर बात के लिए उन्हें ही नहीं जूझना पड़ता, खासतौर पर रोज़ाना के कार्यो के लिए, जिनमें काफी समय लग जाता है। यह एक बड़ी राहत होती है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि माताएं बच्चों से जुड़ी सारी ज़िम्मेदारियां निभाती तो हैं, लेकिन कई बार काम के दबाव में वे चिड़चिड़ी और हताश भी हो सकती हैं। ऐसे में उनका व्यवहार बच्चों पर नकारात्मक असर डालता है। घर में वृद्ध हों, तो इसकी नौबत नहीं आती ।

बुजुर्ग, बच्चों के पालन-पोषण के मामले में अनुभवी होते हैं, इसलिए वे उनसे जुड़ी समस्याओं को जल्दी ताड़ जाते हैं और निबट भी सकते हैं। किसी स्थिति में सम्भव है कि युवा अभिभावक सीधे डॉक्टर के पास दौड़ पड़े, लेकिन वृद्ध अपने अनुभव से जान सकते हैं कि कौन-सी समस्या सामान्य है (और घरेलू उपचार से ठीक हो जाएगी) और कौन-सी गम्भीर ।

बुजुर्गो की बेहतरी

स्वयं अभिभावक बनने के बाद युवाओं को अहसास होता है कि उनके माता-पिता उनके प्रति कैसी भावनाएं रखते हैं। मुमकिन है, उन्हें यह भी अहसास हो कि अपने माता-पिता के साथ उनके रिश्तों की छाया अपने बच्चे के साथ रिश्तों पर भी पड़ेगी । इस तरह कड़वाहट कम होती है और रिश्तों का एक नया दौर शुरू होता है।

बच्चे के साथ समय बिताने और उससे जुड़ी ज़िम्मेदारियां निभाने से वृद्धों को खुशी, संतुष्टि और जीने का नया उदेश्य मिलता है। जब वे बच्चे के साथ व्यवहार करते हैं, तो उनका मस्तिष्क ज़्यादा सचेत व सक्रिय रहता है और इस तरह उन्हें एक नई ऊर्जा और समझ मिलती है। बच्चा यदि थोड़ा बड़ा है, तो वह दादा-दादी को काफी कुछ सिखा भी सकता है, खासतौर पर नई तकनीक के बारे में ।

ज़ाहिर है, दादा-दादी, नाना-नानी की मौजूदगी पूरे परिवार के हित में होती है- बच्चे के हित में तो सबसे अधिक ।

पालन-पोषण के तरीके और सोच को लेकर पीढ़ियों में अंतर सम्भव है और ऐसे में युवा अभिभावकों तथा बुजुर्गो में टकराव भी हो सकता है। इसलिए दोनों की भमिकाएं और सीमाएं तय हो जाएं, तो अधिक अच्छा होगा ।

नए दौर के कुछ दादा–दादी अपनी हॉबी और सामाजिक जीवन में सक्रिय हो सकते है, इसलिए युवाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए कि उनसे चौबीसों घंटे घर पर रहकर बच्चे पर नज़र रखने की अपेक्षा करना उचित नहीं होगा । बुजुर्गो से कोई आशा करने से पहले उनके स्वास्थ्य और सामर्थ्य पर भी गौर करना चाहिए ।

कई मजबूरियों के चलते यदि बुजुर्ग साथ नहीं रह पाते, तो युवाओं को चाहिए कि बच्चों के साथ उनका नियमित सम्पर्क सुनिश्चित करें । वृद्ध भी इंटरनेट आदि के बारे में सीखकर सम्पर्कों के नए जरियों का लाभ उठा सकते है। यह भी तय करें कि जब बुजुर्ग आएं, तो उनके साथ मेहमानों वाला नहीं, घर के सदस्य की तरह व्यवहार हो और उन्हें पूरे अधिकार हों। इससे बच्चा दूर रहने के बावजूद उन्हें परिवार का हिस्सा ही मानेगा ।

दैनिक भास्कर

नोट :– यह पढ़कर मैं अपनी पोती का धन्यवाद करती हूं, जिसने अपनी 13 वर्ष की उमर में जब 70 साल की होने वाली थी, मुझे Internet सिखाया और अब उसके अमेरिका में होने पर मैं आसानी से उसके साथ सम्पर्क में रहती हूं । धन्यवाद फेथ

नेचर का एक अति विचित्र नियम

नेचर के अध्ययन से यह साफ पता लगता है, कि नेचर का यदि अटल स्वभाव है, तो यह है कि वह रहे, और सदा स्थिर रहे । यदि नेचर के भीतर जो जड़ और शक्ति दो पदार्थ विद्यमान हैं, वह अपने स्वभाव से ही अविनाशी हैं। जिस नेचर का स्वभाव ही स्थिर रहना हो, उसके भीतर स्थिर रहने का कार्य ही सदा रह सकता है, न कि विनाथ का कार्य । नेचर के इस स्थिर रहने वाले स्वभाव ने ही उसके भीतर निर्माण कार्य को जय पर जय लाभ करने का सामर्थ्य दी है। इसलिए जब से हमारी पृथ्वी ने सूर्य से प्रसव होकर अपना पृथक अस्तित्व ग्रहण किया है, तब से उस ने परिवर्तन के विश्व व्यापी नियम के अधीन उच्च से उच्च परिवर्तन लाभ किया है। लाखों वर्षो के अनन्तर इसमें जीवनी शक्ति ने प्रकट होकर धीरे धीरे उद्‌भिद, पशु और मनुष्यों के असंख्य अस्तित्वों के रूप में परिवर्तन लाभ किया है। इन असंख्य अस्तित्वों का कुछ भाग उच्च रूपों और गुणों में और कुछ भाग नीच रूपों और गुणों में परिवर्तित हो गया है। मनुष्य जगत् में भी कुछ भाग उच्च रूपों और गुणों में परिवर्तित हुआ है। और उसका बहुत बड़ा भाग नीच रूपों और गुणों में परिवर्तित हुआ है। हम मनुष्य जगत् के उस भाग को उच्च परिवर्तन लाभ किया हुआ कहते हैं, कि जिसके भीतर मनुष्यात्माओं को जीवित रखने और उन्नत करने के गुण पैदा हो गए हों।

हम उन गुणों को उच्च गुण कहते हैं, जो मनुष्य के अस्तित्व की रक्षा करते हैं। हम उन गुणों को नीच गुण कहते हैं जो मनुष्य को क्षय करते हैं। मनुष्य आत्माओं में इन दोनों प्रकार के गुणों का प्रमाण मिलता है, क्योंकि नेचर का अपना स्वभाग स्थिर रहना है, और नाश होना नहीं है। इसलिए नेचर के स्वभाव से मनुष्य के अस्तित्व के वह सब अंग और भाव जो इस अस्तित्व को स्थिर रखते हैं, उच्च अंग और उच्च भाव कहलातें हैं, और वह लाभ करने के योग्य हैं। और जो अंग और भाव मनुष्य के अस्तित्व को क्षय करने का काम करते हैं, वह सबके सब नीच और विनाशकारी अंग और भाव

हैं, और त्याग करने के योग्य हैं। अब यह मनुष्य के हाथ में नहीं है, कि वह किसी उच्च अंग को नीच अंग समझ ले, और किसी नीच अंग को उच्च अंग समझ ले । नेचर के नियमों और घटनाओं के अनुसार जो उच्च है, वह उच्च है और जो नीच है वह नीच है।

नेचर के नियमों और उसकी घटनाओं के अनुसार हृदय के जो भाव मनुष्य के अपने अस्तित्व और अन्य अस्तित्वों के लिए रक्षा और विकासकारी हैं, वह उच्च भाव हैं, और जो भाव मनुष्य के अपने अस्तित्व और अन्य अस्तित्वों के लिए हानिकारक साबित होते हैं, वह सब के सब विनाशकारी हैं। इसका प्रमाण भी नेचर में लाखों मनुष्यों के जीवन से मिलता है। हम स्वार्थ के भाव को क्यों बुरा भाव कहते है? इसलिए कि यह भाव मनुष्य को अन्धा भी बनाता है। स्वार्थ भाव मनुष्य को इस योग ही नहीं छोड़ता , कि वह इस सत्य को देख सके कि इसके पास जो कुछ है, वह उसका नहीं । वह सब का सब नेचर का ही दाल है। यहां तक कि उसका शरीर भी उसका नहीं किसी समय भी नेचर उसका शरीर उससे छीन सकती है। जब यह हकीकत है, तब मनुष्य का क्या कर्त्तव्य है? उसका मुख्य कर्त्तव्य यही है, कि उसके पास जो कुछ नेचर का दान है, वह नेचर के ही विकासकारी कार्य में लगाए । यदि उनमें कंजूसी करता है, तो वह चोर प्रमाणित होता है जब वह अपने धन और सम्पत्ति को और अपनी अन्य शक्तियों को अपना समझता है तो मोह बन्धन पैदा कर लेता है और पाप जीवन को उत्पन्न करता है। और जब उन्हें नेचर की अमानत जानकारी नेचर के विकास कार्य में ही लगाता है तब वह न मोह बन्धनों का दास बनता है, और न उनके लाभ करने और न अपने पास रखने के लिए पाप जीवन को उत्पन्न करता है। इसके सिवाय जो जन अपने धन और सम्पत्ति और अपनी शक्तियों को अपना समझता है, वह इस कदर कंजूस हो जाता है कि वह इन बरकतों को बहुत सारी सूरतों में अपने भले के लिए भी काम में नहीं लगाता । बाकी औरों का भला तो उसने क्या करना था । परन्तु जब वह नेचर की अमानता समझकर उसके निर्माण कार्य में ही लगाना शुरू करता है, तब एक ओर यथेष्ट रूप से अपना भला करता है और दूसरी ओर प्राय: हजारों का भला करने का हेतु बनता है। इसलिए फलों के विचार से जहां पूर्ण स्वार्थी का जीवन – निष्फल जाता है, वहां सेवाकारी का जीवन सच्चे अर्थो में सफल और सार्थक हो जाता है। जब यसूह मसीह ने यह कहा था कि सुई के सुराख में से एक हाथी का गुजारना आसान है, परन्तु धनवान का स्वर्ग में जाना महा कठिन व असम्भव बात है, तब उनके सामने शायद यही बात हो, कि साहूकार अपने धन को अपना समझ कर उसके इकठा करने में ही तृप्ति पाता है और उससे जुदा होने में मौत मालूम करता है। इसलिए वह धर्म जगत् में प्रवेश करने के पूर्णत: अयोग्य हो जाता है।

जब नेचर का यह नियम अटल है, कि प्रत्येक अस्तित्व के वह अंग और भाव रक्षाकारी हैं, कि जो उसे अपने और दूसरों के हित में लगा देते हैं। और वह सब अंग और भाव ध्वंसकारी हैं, जो उसको स्वार्थ्य परायण बनाते हैं, तब क्या मनुष्य का यह कर्त्तव्य नहीं है कि वह इस हकीकत का ज्ञान लाभ करे और उसके अनुसार अपने जीवन को ढाले?

इस सत्य की ज्योति में यह साफ प्रकट होता है कि जितना कोई मनुष्य अच्छी शक्तियों और बरकतों का मालिक है, उतना ही उसका यह कर्त्तव्य हो जता है कि वह उन सबको औरों की सेवा के लिए समझे अर्थात् अपना धन औरों की सेवा के लिए समझे, अपनी सम्पत्ति

औरों के लिए समझे, अपना रौशन दिमाग, अपना उच्च पद और अपना खानदानी गौरव औरों की सेवा के लिए समझे। अगर वह ऐसा न समझेगा और ऐसा न करेगा तो उस का यह सब कुछ विनाश का हेतु प्रमाणित होगा । इसलिए जिसके पास धन नहीं है, उसके ऊपर इतनी जिम्मेवारी नहीं है कि जितनी एक धनाढ्य पर है। जिसके पास कोई पद नहीं हैं, उसके ऊपर वह जिम्मेवारी नहीं है कि जो एक पदधारी पर है। जिसके पास विद्या नहीं, उसके ऊपर इतनी जिम्मेवारी नहीं, जितनी एक विद्वान के ऊपर है। जिसके पास उच्च भाव नहीं , उसके ऊपर इतनी जिम्मेवारी नहीं, जितनी कि एक उच्च भावधारी पर है। जो आत्म अन्धकार में है, उस पर इतनी जिम्मेवारी नहीं है कि जितनी उस पर है, जिसको देव ज्योति मिली हुई है। जो जन भगवान देवात्मा का सेवक नहीं, उसके ऊपर इतनी जिम्मेवारी नहीं है जितनी कि भगवान् देवात्मा के सेवक पर है। जो भगवान देवात्मा का उच्च श्रेणी का सेवक या कर्मचारी नहीं, उस पर इतनी जिम्मेवारी नहीं, जितनी कि भगवान देवात्मा के उच्च श्रेणी के सेवक या कर्मचारी पर है। जिनका भी जो जो कर्त्तव्य है, वह यदि उसको पूरा न करेंगे, तो वह बहुत बुरी तरह से मरेंगे और विनष्ट हो जायेंगे । तब देव समाज के सभासदों, उच्च श्रेणी के सेवकों और कर्मचारियों को यह स्मरण रखना चाहिए कि वह अपने अपने पद के अनुसार अपने अपने कर्त्तवयों को पालन करना सीखें, अन्यथा जिस कदर उनका नाश होगा, उस कदर अन्य बाहर के जनों का नहीं होगा । जितना कोई ऊंचा जाता है, वह यदि पतन को प्राप्त हो, तो वह बहुत नीचे जाता है और उसका बुरी तरह से नाश होता है।

अमूल्य सत्य

भगवान देवात्मा ने जिन कई मूल्यवान आत्मिक सत्यों वा तत्वों का प्रकाश किया है, उनमें से एक सत्य यह है कि मनुष्य का अस्तित्व नाना भावों से परिचालित होकर ही कोई गति करता है। अर्थात एक या दूसरे प्रकार का आन्तरिक या ब्राह्यक क्रिया या चेष्टा करता है । इस गति से आत्मा का अस्तित्व सदा परिवर्तन की दशा में रहता है, और परिवर्तन के अटल नियम के आधीन होकर जैसे नेचर के और लाखों अस्तित्व बदलते रहते है। वैसे ही वह भी बदलता रहता है। यह परिवर्तन दो प्रकार का होता है, तब उसका यह परिवर्तन उच्च व नीच परविर्तन । जब कोई अस्तित्व पहले की अपेक्षा श्रेष्ट बन जाता है, तब उसका यह परिवर्तन उच्च परिवर्तन कहलाता है, और कोई अस्तित्व अश्रेष्ट (नीच) बन जाता है, तब उसका परिवर्तन नीच परिवर्तन कहलाता, जब कोई जन किसी और जन को नाना प्रकार के पापों से निकलना चाहता है, नाला प्रकार के मिथ्या विश्वासों और कुसंस्कारों से निकलने का संग्राम करता है, या इसी उदेश्य के लिए लेख लिखता और पुस्तक रचता है, तब उसकी गति उच्च होती है। जब कोई जन बददियानती या व्यभिचार में लग जाता या किसी के गुण वर्णन या उसकी प्रशंसा को सुनकर ईर्ष्या से जलता है, तो उसकी यह गति नीच गति होती है। जब कोई जन विकास के नियम को भंग करता है तो उसका विनाश होना अवश्यक हो जाता है

Published on 5th of the month

Regd. Postal No.CHD (0077) 2015-17
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

सवाल संतों की शुचिता का

वह कौन से आधार हैं, जिसके कारण संतों और महात्माओं की समाज में इस हद तक स्वीकार्यता है कि वे सरकार के लिए मुश्किल और लोकतंत्र के लिए चुनौती बन जाते हैं।

तांत्रिकों और छोटे-मोटे बाबाओं फकीरों की गतिविधियासें को लेकर समाज बहुत पहले से संदेहास्पद निगाह रखता रहा है, लेकिन यह पहली बार है कि करोड़ों का बाज़ार खड़ा कर चुके दैव छवि वाले पाखंडी संतों के प्रति एक नकार का भाव आ रहा है। खुद को देवचता की तरह पेश करने वाले स्वयंभू संतों को लेकर एक दो वर्षों में जिस तरह के खुलासे हुए हैं, उसने संतई की पूरी परंपरा पर गहरे सवाल खड़े किए है। कोई दुष्कर्मी के रूप में चिह्नित हो रहा है तो कोई सामूहिक सेक्स को मुक्ति के रास्ते के तौर पर पेश कर रहा है। किसी के हाथ खून से लथपथ हैं और कोई गरीबों के जमीनों पर कब्जा करने की ही 'संतई' में गले भर डूबा पड़ा है।

गौरतलब है कि स्वघोषित संत पुराने समय की जड़ मान्यताओं को नए उदाहरणों के साथ प्रस्तुत करते हैं और लोगों का मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं शारीरिक शोषण करते हैं। वह लोगों की निराशा और बेहतर की उम्मीद को अपने आभामंडल और भाषाई फरेब के जाल में फांसकर एक तरह से अपनी आस्था का बंधुआ भक्त बना लेते हैं, जिसके बाद भक्त न सिर्फ उनके किए कार्यों में उचित-अनुचित का फर्क भूल जाते हैं, बल्कि उनपर लगने वाले आपराधिक आरोपों का भी जाहिली की हद तक विरोध करते हैं। हालांकि यह सिलसिला नया नहीं है। जहां देश में वैज्ञानिक चिंतन का विकास होना चाहिए था, वहां देश का बहुसंख्यक पुरातन मान्यताओं के रसास्वादन में लीन हो गया और भारत में संस्कृति और धर्म के फर्क न कर पाने सक एक ऐसी भ्रांति का जन्म हुआ, जिसने हजारों सालों की सांस्कृतिक विरासत को धार्मिक अंधविश्वास बनाकर उस पर गर्व करने को प्रेरित किया।

इस भ्रामक मनोवैज्ञानिक आधार पर कठमुल्लाओं व पोंगापंडितों को पनपने का मौका मिला, जिन्होंने समाज की संपूर्ण विचार प्रक्रिया को पंगु बना

बाकी सफा – 8 पर

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने **Surya Laser Den, Chandigarh** *से छपवाकर म. नं. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts